॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

## कृष्णयजुर्वेदीय

# तेजोबिन्दूपनिषद्

## शान्तिपाठ

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

## प्रणवस्वरूप तेजोमय बिन्दुके ध्यानकी महिमा तथा उसके अधिकारी एवं अनधिकारी

ॐ मायिक जगत्‌से परे हृदयाकाशमें अवस्थित प्रणवस्वरूप तेजोमय बिन्दुका ध्यान ही परम ध्यान है। वह तेजोमय बिन्दुका ध्यान आणव (अत्यन्त सूक्ष्म उपायसे साध्य), शाम्भव (शिवरूपताकी प्राप्ति करानेवाला) एवं शाक्त (गुरुकी शक्तिसे ही साध्य) है। इसी प्रकार स्थूल, सूक्ष्म तथा इन दोनोंसे परे सर्वातीत फलस्वरूप भी है। बुद्धिमान् मुनियोंके लिये भी उस बिन्दुके ध्यानकी साधना बड़ी कठिन है, वह कठिनतासे आराधित (सिद्ध) होता है। वह दुर्दर्श है। उसका आश्रयण कठिनतासे हो पाता है। वह कठिनाईसे ही लक्षित होता है। वह दुस्तर है, उस ध्यानको अन्ततक निभा लेना अत्यन्त कठिन है॥ १-२॥

आहारको जीतकर (मिताहारी होकर), क्रोधको वशमें करके, समस्त सङ्गोंसे तटस्थ होकर, इन्द्रियोंपर विजय करके, सुख-दुःखादि द्वन्द्वोंसे रहित होकर, अहंकारको त्यागकर, समस्त आशाओंको छोड़कर एवं संग्रहहीन होकर तथा दूसरोंको जो अगम्य है, उसे भी प्राप्त करनेके दृढ़ निश्चयसे युक्त होकर, केवल गुरुसेवाका ही प्रयोजन रखनेवाला साधक इस ध्यानका मुख्य अधिकारी है। इस तेजोमय बिन्दुके ध्यानमें साधकलोग वैराग्य, उत्साह एवं गुरुभक्ति—ये तीन द्वार (प्रमुख साधन) उपलब्ध करते हैं; अतः यह हंस (विशुद्धतत्त्व) त्रिधामा कहा जाता है॥ ३-४॥

यह ध्यान करनेयोग्य तेजोबिन्दु परम गोपनीय एवं अधिष्ठानरूप है। यह सबको प्रतीत न होनेके कारण अव्यक्त है, ब्रह्मस्वरूप है; इसका कोई अधिष्ठान नहीं। यह स्वयं ही सबका आधार है। यह आकाशके समान व्यापक है, सूक्ष्म-कलात्मक एवं भगवान् विष्णुका प्रसिद्ध परमपद (परमधाम) भी यही है। यह तीनों लोकोंका पिता (उत्पत्तिस्थान), त्रिगुणमय, सबका आश्रय, त्रिभुवनस्वरूप, निराकार, गतिहीन, समस्त विकल्पोंसे रहित, बिना किसी आधार एवं आश्रयका—स्वप्रतिष्ठानस्वरूप है। यह समस्त उपाधियोंसे रहित, स्थिति, वाणी प्रभृति इन्द्रियों एवं मनकी गतिसे परे, स्वभावकी भावना (अपने वास्तविक स्वरूपके चिन्तन)-द्वारा ही ग्राह्य तथा समष्टि और व्यष्टिवाचक पदोंसे भी अगम्य है॥ ५—७॥

यह तेजोबिन्दु आनन्दस्वरूप, विषय-सुखोंसे परे, बड़ी कठिनाईसे साक्षात् होनेवाला, अजन्मा, अविनाशी, चित्तकी वृत्तियोंसे विनिर्मुक्त, शाश्वत, निश्चल तथा अस्खलित है। वही ब्रह्मस्वरूप है। वही अध्यात्मस्वरूप है। वही निष्ठा, परम मर्यादा और वही परम आश्रय है। वह शून्य न होनेपर भी शून्यके समान है और शून्यसे परे स्थित है। वह न ध्यान है, न ध्यान करनेवाला है और न ध्येय है; तथापि सदा ध्यान करनेयोग्य अथवा ध्येयस्वरूप ही है। वह सर्वस्वरूप और सबसे परे है। शून्यस्वरूप है। उस परमतत्त्वसे परे कुछ भी नहीं है। वह परात्पर है। वह अचिन्त्य है। उसमें जागरण आदिका व्यापार नहीं है। उसे ज्ञानी महात्मा सत्यरूपसे ही जानते हैं। वह मुनियोंके योग्य (मुनियोंका आराध्य) तत्त्व है और देवता उसे परमतत्त्वरूप ही जानते हैं॥ ८—११॥

लोभ, मोह, भय, अहङ्कार, काम और क्रोधके परायण तथा पापोंमें लगे हुए लोग, सर्दी-गर्मीके द्वन्द्वोंमें आसक्त, भूख-प्यासकी चिन्ता एवं विविध संकल्प-विकल्पोंमें संलग्न, ब्राह्मण (उच्च) वंशमें उत्पत्तिका गर्व रखनेवाले और मुक्ति-प्रतिपादक शास्त्रोंके केवल संग्रहमें आसक्त (केवल शास्त्रज्ञानी) उस तेजोबिन्दुको नहीं जान पाते। तथा वह भय, सुख-दुःख तथा मानापमानादिमें फँसे हुए लोगोंको भी नहीं प्राप्त होता। जो इन सारे (दूषित) भावोंसे छूटे हुए हैं, उन्हींके द्वारा यह परात्पर ब्रह्म प्राप्त होनेयोग्य है। उन्हींके द्वारा वह परात्पर ब्रह्म प्राप्त होनेयोग्य है॥ १२-१३॥

॥ कृष्णयजुर्वेदीय तेजोबिन्दूपनिषद् समाप्त ॥

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!